धर्म और राजनीति के गठबंधन का शिकार - 'हानूश'

(मध्ययुगीन परिप्रेक्ष्य में समकालीन हिन्दी नाटक : 'हानूश')

प्रा.डॉ.भारती एफ. चौधरी
(हिन्दी विभाग)
एस.बी.महिला कॉलेज,
हिम्मतनगर,(सा.कां.) गुजरात

भारतीय मीमांसको ने नाटक को चाक्षुषा यज्ञ, द्रश्य काव्य, पंचम्वेद और प्रयोगशील कला मानकर इसकी व्यवहारिक और सैद्धांतिक व्याख्या की है, जो वर्तमान संदर्भ में पूरी तरह प्रासंगिक एवं रचनात्मक सिद्ध होती है । आज के हिन्दी नाटक अपनी केन्द्रिय एवं मौलिक मुद्रामें मानवजीवन के सभी पक्षो से जुड़े हैं । समकालीन नाटको में प्रमुखतः सामाजिक चेतना के साथ वर्णव्यवस्था, विवाह, पति-पत्नि, संबंध वेश्या समस्या, दहेज, संयुक्त परिवार विघटन । आर्थिक चेतना के अंतर्गत निर्धनता, बेकारी, महँगाई, भ्रष्टाचार, राष्ट्रीय चेतना आदि विचारबोध को केन्द्र में रखकर नाटककारों ने नाटक लिखे हैं । समकालीन नाटककारों ने इन सभी सांप्रत विषयों पर नाटक लिखकर दर्शको, पाठकों के साथ समूचे समाज को नई दिशा देने हेतु सराहनीय कार्य किया है ।

मैं यहाँ मध्ययुगीन परिप्रेक्ष्य में समकालीन वस्तुजगत पर तीखा प्रहार करनेवाले नाटक 'हानूश' की चर्चा करना चाहूँगी । हमारे भ्रष्ट और विषाक्त राजनीतिक परिवेश की तीखी और स्पष्ट अकिव्यक्ति डॉ. चन्द्रशेखर ने इन शब्दों में की है -

भ्रष्टशासन, जनधाती तंत्र, लुच्ची व्यवस्था दोगली
सिंहासन धर्मिता, बेहया शक्ति का वंशानुगत
ध्रुवीकरण । यह है हमारा कुल राजनैतिक पर्यावरण ।

जी हाँ, आपातकालीन परिवेश को मध्ययुगीन परिक्ष्य में दिखाने वाला नाटक ' हानूश' एक स्तर पर कलाकार की दुर्दमनीय सिसृच्छा का, दूसरे स्तर पर मध्ययुगीन सामन्ती परिवेश की मानवीय दशा और तीसरे स्तर पर धर्म एवं शासन के गठबंधन के विरुद्ध सामाजिक संघर्ष का नाटक है ।

नाटक के रचयिता भीष्म साहनीजी ने समसामयिक नाटककारों में अपनी विशेष उपस्थिति दर्ज की है । १९७७ तक उनकी ख्याति एक कथाकार के रुप में थी । ‘ तमस’ और ‘वाङचू’ जैसी चर्चित रचनाओं के लेखक के रुप में हिन्दी साहित्य में उनकी अलग पहचान बनी । नाटक के क्षेत्र में उनका पदार्पण ‘हानूश’ नाटक से हुआ जो १९७७ में प्रकाशित हुआ । इसके पश्चात् उनके कमशः ‘कबीरा खड़ा बाज़ार में’ तथा ‘माधवी’ नाटक भी सामने आए । आठवें दशक से प्रारंभ हुई उनकी इस रंगयात्रा ने हिन्दी नाट्यक्षेत्र में उन्हें विशिष्ट पहचान दी है ।

उनके प्रमुख नाटकों का कथ्य भी अतीत का आश्रय लेना रहा है, किन्तु उनके नाटको में इतिहास की भूमि सामाजिक यथार्थ से बहुत गहरे जुडती नजर आती है । तीनों नाटकों में अतीत का आश्रय भर लिया गया है। ‘हानूश’ नाटक लिखने की प्रेरणा साहनीजी को प्राग में घूमते हुए एक मीनार घडी को देखकर मिली । नाटक की रचना चेक (चेकोस्लोवाकिया) इतिहास की एक किवदंती पर आधारित है । तीन अंक, छह दृश्यों तथा १९-२० वर्ष की कालावधि को समेटे यह एक यथार्थवादी शिल्प का नाटक है ।

हानूश चेकोस्लोवाकिया का एक घड़ी साज था । उसने अपनी सारी जिन्दगी लगाकर एक घडी का निर्माण किया । समय-समय पर अनेक व्यक्तियों और वर्ग से उसे सहायता मिली । समय-समय पर वह असफल भी हुआ परंतु अंत में वह सफल हुआ । घड़ी नगर के चौराहे की मीनार पर लगा दी गई, राजाने उसे उपहार देकर पुरस्कृत भी किया, परंतु वह भविष्य में ऐसी घडी का निर्माण न कर सके, इसलिए उसकी दोनों आँखे निकाल ली गई । और देश छोडकर जाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया । सत्ता के इस व्यवहार से क्षुब्ध हानूस ने अपने शिष्य को घड़ी बनाने के रहस्य के साथ किसी प्रकार देश से बाहर भेज दिया । एक दिन घड़ी खराब होने पर हानूश को बुलवाया गया, और उसे मरम्मत करने के लिए कहा गया । उस क्षण वह गहरे अंर्तद्वद्वमें था । अपनी दुर्दशा का प्रतिशोध लेकर घड़ी को तोड डाले अथवा उसे फिर से ठीक कर दे । अंततः उसके भीतर का रचयिता स्रष्टा विजयी होता है । वह घड़ी ठीक कर देता है, और ऐसा करके वह प्रसन्न भी होता है ।

यह नाटक अतीताश्रय में वर्तमान समय के बोध को निरंतर अभिव्यंजित करता चलता है और नाटककार का उद्देश्य भी यही है, न कि इतिहास का कोई ढाँचा खडा करना । स्वयं भीष्मजी के शब्दों में -

> इस नाटक का अभिप्राय घडियाँ के आविष्कार की
> कहानी कहना नहीं है । मानवीय स्थिति को मध्यगुगीन
> विसंगतियों के माध्यम से दिखाने का प्रयास मात्र है ।

वास्तव में लेखक मध्ययुगीन परिप्रेक्ष्य में समकालीन वस्तुजगत पर ही व्यंग्य करता है । नाटक की रचना १९७७ में हुई थी । स्पष्ट है कि वह १९७५ के आपातकालीन परिवेश और सत्ता द्वारा कलाकार सृजक की स्वातंत्र्य हनन की पीड़ा को ही रुपांतरित कर रहा है ।

इस बात का समर्थन हमें डॉ. नरनारायण राय के इस कथन से भी मिलता है -

> ‘‘हमें कलाकार का शासन द्वारा प्रभावित किया जाना ही
> वह बिन्दु दिखता है, जहाँ दर्शकों का नाट्यानुभूति से
> साक्षात्कार संभव हो सकता है । क्योंकि, वर्तमानकाल की
> आपातकालीन स्थितियाँ कुछ वैसे ही जीवन संदर्भों से जुडी है ।..
> कहीं गहरे कलाकार हानूश के समय की स्थितियों में और
> १९७५-७६ की समयावधि की स्थितियों में भी वह अनुभूतिजन्य
> साम्य मौजूद है, जिसने हानूश और भीष्म साहनी दोनों को ही
> कलाकार हृदयों को भीतर तक झकझोर डाला था ।’’

साहनीजी हानूश के माध्यम से लेखक की पीड़ा और द्वन्द्व को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं । नाटक की बुनावट में वेदना की जो एक सतत प्रवाहमान अंर्तधारा है, एक सर्जक - कलाकार और उसके परिवार की मौन मुखर वेदना, तनाव और छटपटाहट है, वही इस नाटक का प्राण है । कलाकार की इसी पीड़ा और त्रासदी को अभिव्यक्त करता हुआ हानूश कहता है -

> हरबार जब घड़ी बजती है, तो मुझे लगता है, मेरे अंधेपन का
> मजाक उडा रही है । सभी लोग हँसने लगे है । राजा, लाट

पादरी सभी । और मुझ पर एक अजीब-सा पागलपन छाने
लगता है ।

किन्तु कलाकार को कष्ट देकर सृजनशीलता को खत्म नहीं किया जा सकता । हानूश पर हुए अत्याचार प्रत्येक युग में सृजनशील कलाकार की चुनौती है । कलाकार की सृजनशक्ति ही उसकी प्रेरणा बन जाती है ।

कला और कलाकार का रिश्ता भी महत्त्वपूर्ण है । हानूश और उसकी घड़ी के प्रति उसके लगाव को कला की सृजनशीलता से जोड़ा गया है । जब वह कहता है -

''मैंने अपने लिए तो घड़ी नहीं बनाई थी - ना कात्या,
यह तो सबकी चीज थी । एक बार बन गयी तो
सबकी हो गयी । मेरी कहाँ रह गयी ? ....''

कला की यही सार्वजनिकता ही कलाकार की सच्ची उपलब्धि भी है । हानूश के द्वंद्व को स्वरोक्ति भी इसी बात को इंगित कहती है ।

अंततः 'हानूश' नाटक में कलाकार की संघर्षमय चेतना को नाटककारने युगीन संवेदना के आलोक में प्रभावपूर्ण बना दिया है । देशकाल, वातावरण और मानवीय स्थितियों की पकड में यह नाटक विशेष सफल है । क्योंकि युरोप के मध्ययुगीन परिवशे की मौलिकता और हानूश के अंर्तमन के द्वंद्व और संघर्षशीलता ने न केवल नाटक को मानवीय संवेदनात्मक घरातल पर विश्वसनीय बना दिया है। अपितु कला और कलाकार के बीच धर्म और सत्ता द्वारा उठाये जानेवाले कुछ महत्त्वपूर्ण एवं ज्वलंत प्रश्नों को भी मध्ययुगीन संदर्भ में अपनी सामयिक संगति के साथ उभारकर नाटक को प्रासंगिक युगधर्म के अनुकूल बना दिया है ।

अंततः कथा का आधार विदेशी होते हुए भी एक कलाकार की संवेदना सर्वदेशिय एवं समकालीन है ।